प्रार्थना की सामर्थ्य

क्या प्रार्थना सचमुच कुछ बदल सकती है?

Hans-Jörg Ronsdorf का प्रवचन

स्वयं परमेश्वर ने प्रार्थना को उसका महत्व दिया है और स्वयं को अपनी संतानों की प्रार्थना से बाँध लिया है, जिससे घटनाओं का क्रम बदल सकता है। उदाहरण: यहेजकेल 22:29-31; भजन संहिता 106:23; निर्गमन 32:10-14। यहेजकेल के समय में मध्यस्थता करने वाला कोई नहीं था। प्रार्थना का न होना बुरे परिणाम लाता है। प्रार्थना न्याय को रोक सकती थी। मूसा ने प्रार्थना की, और न्याय टल गया।

यीशु और प्रार्थना: पृथ्वी पर परमेश्वर की इच्छा पूरी नहीं होती। कम से कम हर जगह नहीं। इसलिए हमें प्रार्थना करनी है कि जैसे स्वर्ग में उसकी इच्छा पूरी होती है, वैसे ही पृथ्वी पर भी हो। प्रार्थना परमेश्वर की इच्छा पूरी होने में सहायता करती है – उससे कहीं अधिक, जितना तब होता जब हम उसके लिए प्रार्थना न करते।

जॉन वेस्ली (John Wesley) ने कुछ बढ़ा-चढ़ाकर कहा: "परमेश्वर हमारी प्रार्थनाओं का उत्तर देने के सिवा कुछ नहीं करता।" परमेश्वर अपने लोगों की प्रार्थनाओं का असाधारण रीति से उत्तर देता है, जैसे लाल समुद्र के पास मूसा, या हिजकिय्याह की आयु का बढ़ाया जाना। धर्मी जन की प्रार्थना के प्रभाव से बहुत कुछ हो सकता है! (याकूब 5:16)

परमेश्वर और मनुष्य के बीच संवाद की आवश्यकता: परमेश्वर हमारे साथ एक व्यक्तिगत संबंध में रहना चाहता है। यह केवल संवाद से ही संभव है – जैसे मनुष्यों के बीच भी बिना संवाद के कोई संगति नहीं होती। परमेश्वर ने संसार को ऐसा बनाया है कि जो कुछ होता है, उसमें से बहुत कुछ का संबंध उसके साथ हमारे संवाद से है।

प्रार्थना और नैतिक रूप से उत्तरदायी निर्णय का अधिकार: परमेश्वर ने संसार को ऐसा बनाया है कि केवल वही हम पर प्रभाव नहीं डालता, बल्कि हम भी उस पर प्रभाव डालते हैं। परमेश्वर चाहता है कि पृथ्वी पर उसकी इच्छा पूरी हो। वह प्रतिनिधियों के द्वारा कार्य करता है: उसके स्वरूप में बनाए गए मनुष्यों को पृथ्वी पर शासन करना है। **प्रार्थना शासन का एक आत्मिक, एक अदृश्य और अस्थायी रूप है – हम उन बातों के लिए प्रार्थना करते हैं जिन्हें यहाँ पृथ्वी पर होना चाहिए। जब हम प्रार्थना में उसके साथ सहमत होते हैं, तो यह उसके साथ मिलकर शासन करना है।**

प्रार्थना की अत्यावश्यकता: परमेश्वर प्रार्थना को गंभीरता से लेता है; वह स्वयं को उससे उसी तरह बाँधता है जैसे चुनाव की स्वतंत्रता और संसार की स्थिरता से। सचमुच ऐसा है कि बहुत कुछ इस पर निर्भर करता है कि परमेश्वर के लोग प्रार्थना करते हैं या नहीं – कुछ बातें तभी होती हैं जब वे प्रार्थना करते हैं। स्वयं परमेश्वर ने ऐसा ठहराया है कि प्रार्थना एक निर्णायक कारक हो, जो यह तय करता है कि किसी विशेष परिस्थिति में परमेश्वर क्या कर सकता है और क्या नहीं कर सकता।

अत्यावश्यकता और सीमाएँ: इससे कोई गलत निष्कर्ष निकाल सकता है, मानो सब कुछ हमारी प्रार्थना पर ही निर्भर हो। हमें इसमें संतुलन चाहिए कि हम अपनी ज़िम्मेदारी और कर्तव्य को कैसे निभाएँ। स्वाभाविक जीवन में भी ऐसा ही है। हम दस लाख बातों के लिए प्रार्थना कर सकते हैं, पर हमारा समय सीमित है। इसलिए यह भी अच्छा है कि हम इस बात के लिए प्रार्थना करें कि अपनी प्रार्थना को किन बातों पर केंद्रित करें। **हमें दो धारणाओं**

के बीच संतुलन चाहिए: एक यह कि सब कुछ हमारी प्रार्थना पर निर्भर है, और दूसरी यह कि कुछ भी उस पर निर्भर नहीं है।

अनुत्तरित प्रार्थनाएँ क्यों होती हैं? हम प्रार्थना करते हैं, और परमेश्वर एक अकल्पनीय रूप से जटिल सृष्टि के भीतर उत्तर देता है, जो एक ब्रह्मांडीय युद्ध के बोझ तले दुख उठा रही है। **वहाँ प्रार्थना अंतर लाती है।** परंतु प्रार्थना ही एकमात्र चीज़ नहीं है जो संसार को निर्धारित करती है। इसमें वे बहुत-से स्वर्गदूत और मनुष्य भी शामिल हैं जिनकी इच्छा अपरिवर्तनीय रूप से स्वतंत्र है, और प्रकृति के नियम भी, जो एक स्थिर संसार की गारंटी देते हैं। परमेश्वर इसका सम्मान करता है; उसने स्वयं ऐसा ही चाहा। परंतु हमें बिल्कुल पता नहीं कि हमारी प्रार्थना का कारक इन दूसरे कारकों से कैसे जुड़ता है, अर्थात् परमेश्वर हमारी प्रार्थनाओं के आधार पर इनके साथ कैसे व्यवहार करता है। हमारी प्रार्थनाओं का उत्तर दिया जाएगा, पर अक्सर उस तरह नहीं जैसा हम सोचते हैं।

वे कारक जो प्रार्थना की प्रभावशीलता पर असर डालते हैं – नियम, जो स्वयं परमेश्वर देता है:

परमेश्वर की इच्छा: यह एकमात्र कारक नहीं है, परंतु सबसे मूलभूत है। उसकी इच्छा के अनुसार माँगना उत्तर पाने की शर्त है (1 यूहन्ना 5:14; मत्ती 26:39; 2 कुरिन्थियों 12:7)। परंतु परमेश्वर की इच्छा का अर्थ हमेशा परमेश्वर की आदर्श इच्छा या उसकी सिद्ध योजना नहीं होता। शरीर में काँटा आदर्श नहीं था, परंतु पौलुस के लिए उसका होना बेहतर था। उसने उसे घमंड से बचाए रखा! क्या हमारी कुछ प्रार्थनाओं का उत्तर इसलिए नहीं मिलता कि उनका उत्तर हमें घमंडी बना देता? प्रार्थनाओं का उत्तर न मिलने का कारण आवश्यक नहीं कि परमेश्वर की इच्छा में ही हो (यदि कोई व्यक्ति, जिसके लिए मैं प्रार्थना करता हूँ, मन नहीं फिराता, तो परमेश्वर उसका मन फिराना चाहता तो है, परंतु वह उस व्यक्ति के "नहीं" का सम्मान करता है)।

जिस व्यक्ति के लिए प्रार्थना की जाती है, उसका विश्वास: नासरत में अविश्वास के कारण यीशु वहाँ केवल थोड़े ही आश्चर्यकर्म कर सका (मरकुस 6:5-6)। चंगे हुए लोगों से यीशु ने कई बार कहा: "तेरे विश्वास ने तुझे चंगा किया है" (मत्ती 9:22; मरकुस 10:52; लूका 17:19)। परंतु हम इसे उलटकर सामान्य नियम नहीं बना सकते: यदि चंगाई नहीं होती, तो इसका कारण आवश्यक नहीं कि विश्वास की कमी हो। किसी प्रार्थना का उत्तर क्यों नहीं मिला, इसके बहुत-से कारण हो सकते हैं जिनकी थाह हम नहीं ले सकते। परंतु जिस व्यक्ति के लिए प्रार्थना की जाती है, उसका विश्वास एक कारक है!

प्रार्थना करने वालों का विश्वास: लूका 5:20: वह लकवे का रोगी जिसे छत से नीचे उतारा गया; मत्ती 8:13: सूबेदार; परंतु मरकुस 9:14-29 भी: चेले दुष्टात्मा को नहीं निकाल पाते। याकूब 1:6-7 भी देखिए। परंतु अनुत्तरित प्रार्थना का अर्थ सामान्यतः यह नहीं होता कि व्यक्ति में विश्वास नहीं था। यह एक सिद्धांत है कि विश्वास प्रार्थना को अधिक प्रभावशाली बनाता है, परंतु यह कोई नियम नहीं कि उसका उत्तर हमेशा मिलेगा।

लगातार प्रार्थना: दृश्य जीवन में ऐसे काम होते हैं जिनके लिए धीरज और समय चाहिए। प्रार्थना के जीवन में भी ठीक ऐसा ही है (लूका 11:5-8; 18:1)। प्रार्थना कोई जादू नहीं, बल्कि आत्मिक परिश्रम है। हमें ऐसे प्रार्थना करनी है मानो हमें किसी चीज़ की बहुत सख़्त ज़रूरत हो। निरंतर (1 थिस्सलुनीकियों 5:17)। परंतु यदि किसी प्रार्थना का उत्तर नहीं मिलता, तो इसका अर्थ आवश्यक नहीं कि हमने बहुत कम प्रार्थना की। और लंबे समय तक प्रार्थना करना भी इस बात की गारंटी नहीं कि उत्तर मिलेगा। यह एक सिद्धांत है, पूरा होने की गारंटी नहीं – क्योंकि बहुत-से कारक भूमिका निभाते हैं।

किसी बात के लिए प्रार्थना करने वालों की संख्या: प्राकृतिक क्षेत्र में कुछ काम अकेले पूरे नहीं किए जा सकते, या उनमें बहुत अधिक समय लगेगा। आत्मिक क्षेत्र में भी ऐसा ही है। इसलिए हम कलीसिया से किसी बात के लिए

प्रार्थना करने को कहते हैं। दो या तीन एक मन होते हैं (मत्ती 18:19), सभा ने प्रार्थना की (प्रेरितों के काम 4:24)। अनेक लोगों का मिलकर प्रार्थना करना प्रार्थना को एक और ही आयाम देता है, जो अकेले प्रार्थना करने में नहीं होता। यह कोई नियम नहीं, परंतु एक सिद्धांत है।

मनुष्य की स्वतंत्र इच्छा: नरक इस बात का गंभीर प्रमाण है कि परमेश्वर मनुष्य की इच्छा को गंभीरता से लेता है। उसने मनुष्यों को ऐसा बनाया कि वे स्वयं निर्णय लें, और परमेश्वर इस इच्छा का सम्मान करता है। जब हम किसी के मन फिराने के लिए प्रार्थना करते हैं, तो परमेश्वर इस इच्छा को कुचलता नहीं, नहीं तो सब उद्धार पा जाते। परंतु हमारी प्रार्थना इन लोगों में आत्मा के कार्य को और प्रभावशाली बनाती है। परमेश्वर की सामर्थ्य ज़बरदस्ती नहीं करती, बल्कि क़ायल करती है: और उसकी सामर्थ्य प्रेम है!

स्वर्गदूतों की स्वतंत्र इच्छा: स्वर्गदूत प्रार्थनाओं के उत्तर पर प्रभाव डाल सकते हैं। दानिय्येल को तब तक प्रतीक्षा करनी पड़ी जब तक वह स्वर्गदूत नहीं आया, जिसे किसी दूसरे ने रोक रखा था। यह परमेश्वर का समय-निर्धारण नहीं था, बल्कि अदृश्य संसार में विरोध और आत्मिक युद्ध था (दानिय्येल 10:12-13)। शैतान ने पौलुस को थिस्सलुनीकियों से मिलने जाने से रोका, यद्यपि वह इसके लिए प्रार्थना करता था (1 थिस्सलुनीकियों 2:18; 3:10)। ये शक्तियाँ प्रार्थना के उत्तर मिलने या रुक जाने पर प्रभाव डालती हैं। वे इस बात का कारण हो सकती हैं कि किसी प्रार्थना का उत्तर नहीं मिलता, और तब हमें इसे परमेश्वर के नाम नहीं लगाना चाहिए।

आत्मिक प्राणियों की संख्या और सामर्थ्य: दृश्य संसार की तरह आत्मिक युद्ध का संबंध भी इन बातों से है। स्वर्गदूत एक-दूसरे की सहायता के लिए आते हैं, क्योंकि इससे अंतर पड़ता है (दानिय्येल 10:13)। एलीशा के सेवक ने स्वर्गदूतों की वह भीड़ देखी जो सहायता के लिए आई थी (2 राजाओं 6:16-17)। एक मनुष्य में एक नहीं, बल्कि बहुत-सी दुष्टात्माएँ थीं, जिन्हें यीशु ने निकाला (मरकुस 5:1-9)। एक शक्तिशाली दुष्टात्मा को चेले नहीं निकाल सके (मरकुस 9:14-29)। सात आत्माएँ लौट आती हैं (लूका 11:24-26)। हमें डरने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि जो हम में है, वह संसार की आत्मा से बड़ा है (1 यूहन्ना 4:4)।

पाप: जहाँ ज्ञात पाप, शत्रुता या क्षमा करने की अनिच्छा है, वहाँ पाप से निपटना आवश्यक है: उसे छोड़ना और मान लेना होगा, ताकि हम धर्मी जन के रूप में फिर से प्रभावशाली प्रार्थना कर सकें।

हम इस युद्ध-क्षेत्र में, हज़ार प्रश्नों और अनुत्तरित प्रार्थनाओं के साथ, मसीही के रूप में कैसे जी सकते हैं?

अपनी आँखें यीशु पर लगाए रखें – अपने अनुभवों से परमेश्वर की छवि न गढ़ें!

परमेश्वर हमारे साथ और हमारे पास है! हमेशा!

परमेश्वर हर परिस्थिति से, हर दुख से, हमारे लिए कुछ भला उत्पन्न कर सकता है (चाहे बुराई उसने उत्पन्न न की हो)।

“क्यों?” वाला प्रश्न न पूछें, जिसका उत्तर कोई नहीं दे सकता, बल्कि दुख के विरुद्ध, बुराई के विरुद्ध खड़े हों, उसे स्वीकार न करें। ठीक वैसे ही जैसे यीशु ने किया!

हम कैसे जी सकते हैं और सही मार्ग तथा सही निर्णय कैसे पा सकते हैं? उस आत्मा के द्वारा जीकर और उसकी अगुवाई में चलकर, जो हम में वास करता है!

नई सृष्टि की आशा में जिएँ! सारा दुख समाप्त हो जाएगा! जल्द ही!

इस प्रवचन के बहुत-से विचारों के लिए मैं ग्रेगरी ए. बॉयड (Gregory A. Boyd) का आभारी हूँ।